Question → The reign (शासन = उदय) of Jayavarman II is a turning point in the history of Kambuja. Elucidate

आठवीं शताब्दी में जावा के आक्रमण से कम्बुज की शक्ति छिन्न भिन्न हो गयी थी लगभग एक शताब्दी तक यहाँ की शासन व्यवस्था अस्त व्यस्त रही। इस अव्यवस्था का अन्त नौवीं शदी में हुआ।

802 ई० में जयवर्मन द्वितीय गद्दी पर बैठा जिसने कम्बुज की राजनीतिक विखराव को खत्म कर इन्हें एकसूत्र में बाँधा। इसने पचास वर्षों के अपने शासन काल में कम्बुज को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया। अतः और सारा कम्बुज को एक सूत्र में बाँध दिया गया।

कम्बुज में जयवर्मन II का कोई लेख नहीं मिला है परन्तु इसके वंशजों के अभिलेखों से इसके संबंध में पूर्ण जानकारी मिलती है। यों तो इसके पूर्वजों की कोई जानकारी नहीं है परन्तु विद्वानों ने इसका संबंध श्रीनन्दिनपुर के पुरुकराक्ष से जोड़ा है कहीं-कहीं तो जयवर्मन II को पुरुकराक्ष का भांजा बताया गया है।

जयवर्मन के राज्य के संबंध में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान यह मानते हैं कि जयवर्मन II का संबंध कम्बुज के

राजकीय परिवार से रहा होगा जबकि कुछ विद्वानों के अनुसार कम्बुज की प्रजा का जन उठाकर इसके शासक बनने की बात कहते हैं।

प्रारंभ में जयवर्मन कम्बुज के कुछ प्रदेशों का ही अधिकारी था परन्तु गद्दी संभालने के बाद इसने अपनी विखरी एकता को एक सूत्र में पिरोने का सफल प्रयास किया। इसके स्टोक कॉक-धाम लेख से ज्ञात होता है कि इसने अपने राज्यकाल में अनेक राजधानियाँ बनायी जिसका कारण राजनीतिक परिस्थितियाँ थी। ~~भारतीय ब्राह्मण हिरण्यदाम~~ ~~शिव शिव कैवल्य~~ इन्द्रपुर नामक राजधानी का निर्माण इसने अपने राजगुरु शिवकैवल्य की सहायता से की थी। इसके गुरु शिवकैवल्य ने भारतीय ब्राह्मण हिरण्यदाम से तंत्र विद्या की शिक्षा ग्रहण की थी। विद्वानों का अनुमान है कि वर्तमान बन्ते-प्राह-नोगोर ही प्राचीन इन्द्रपुरी रही होगी, यहाँ से ~~कुछ~~ प्राप्त भग्नावशेषों की कलाकृतियाँ भी प्राचीन ही है। ~~स्टर्न ने इसी को अंकोर के विरुद्ध~~ इसकी राजधानी हरिहरालय में भी रही थी, जहाँ उसने मंदिरों का निर्माण करवाया। इसने अपना अधिकांश समय संभवतः यहीं बिताया था। इन्द्रपुरी को इसने दो बार अपनी राजधानी बनाई। इसने कुछ समय के लिए अमरेन्द्रपुरी को भी अपनी राजधानी बनाया जिसकी तुलना वर्तमान बन्ते-चमर से की गई है।

की मोटी ईंटें पा [illegible]

परन्तु बगले चम से प्राप्त अवशेष 12 वीं शदी के हैं अतः यहाँ जयवर्मन की राजधानी नहीं रही होगी।

इस समय कम्बुज को चम्पा से प्रायः भय बना हुआ था अतः राजा जयवर्मन को इस ओर काफी सतर्क रहना पड़ा। पो-नगर के लेख में भी इस बात का उल्लेख आया है कि चम सेनापति ने कम्बुज की सीमा में प्रवेश कर देश को काफी क्षति पहुँचायी थी। यह घटना जयवर्मन द्वितीय के अन्त में ही संभवतः घटी थी जिससे उसे अपनी राजधानी बार बार बदलनी पड़ी थी।

जयवर्मन II ने चम्पा को युद्ध में पराजित भी किया था। साम्राज्य विस्तार के क्रम में इसने लाओस को भी अपने राज्य में मिला लिया। अपनी वीरता के बल पर इसने कम्बुज की राजनीतिक एकता स्थापित की। जयवर्मन की प्रशंसा करते हुए इबनबतूता ने अपने ग्रंथ में लिखा है, "इसका राज्य बृहत् और शक्तिशाली था और इसके अधीन कई और राज्य थे।"

एक स्वतंत्र और शक्तिशाली राज्य स्थापित कर उसे सुव्यवस्थित करने के बाद राजा ने वास्तुकला की प्रगति पर विशेष ध्यान दिया जिससे इस युग में वास्तुकला उन्नति के चरम शिखर पर पहुँच गया। इस काल को स्वर्णकाल भी कहा गया है। हरिहरालय

के क्षेत्र में एक कृत्रिम झील का निर्माण, अनेक कलात्मक मंदिरों की स्थापना इसके उदाहरण हैं।
खुदाई में महेन्द्रपर्वत, हरिहरालय तथा अमरेन्द्रपुर में अभी भी पुरा वस्तुएँ मिलती हैं जिससे तत्कालीन धर्म एवं समाज पर प्रकाश पड़ता है। कम्बोडिया के स्थापत्य कला में अंकोरवत तथा बेयोन के मंदिर के बाद हरिहरालय का कला की दृष्टि से अपना विशिष्ट स्थान था। प्रारंभ में कम्बुज में शैवधर्म प्रचलित था परन्तु बाद में इसका स्थान बौद्धधर्म ने ले लिया। इस परिवर्तन का प्रभाव यहाँ के मंदिरों पर स्पष्ट दिखता है जिसके गर्भगृह की कलाकृतियाँ शैवधर्म से प्रभावित हैं पर मध्यभाग बौद्ध गाथाओं से युक्त हैं। इसकी राजधानी के रूप में महेन्द्र पर्वत भी मुख्य है। यहीं देवराज सम्प्रदाय की स्थापना हुई थी।

जयवर्मन एक शक्तिशाली सम्राट था जिसने अपने नेतृत्व में कम्बुज को एक लम्बे समय तक शान्तिपूर्ण पर सशक्त शासन प्रदान किया। इसके संबंध में यों तो विस्तृत जानकारी का अभाव है फिर भी साक्ष्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इसका पड़ोसी राज्यों से अच्छे संबंध थे परन्तु चम्पा के प्रति इसे सदैव चौकन्ना एवं सतर्क रहना पड़ा जिसकी पुष्टि अरबी ग्रंथों से होती है। दसवीं शताब्दी के एक लेख में जयवर्मन II के शौर्य

की मोहरों पर व्याघ्र आकृति का चित्र ...

एवम् पराक्रम की प्रशंसा की गई है। इसमें इसके चित्र पर भी प्रकाश डाला गया है।

यह शैव मतावलम्बी था, अपने गुरु शिवकैवल्य के साथ इसने देवराज सम्प्रदाय की स्थापना तांत्रिक विधि से अपने राज्य के सबसे ऊँचे स्थान महेन्द्र पर्वत पर किया। इस समय धार्मिक दृष्टिकोण से मृत्यु के बाद राजा की भी मूर्ति मंदिर में स्थापित कर पूजा की जाती थी। देव राज की पूजा का अधिकार राजा और उसके वंशज तथा तप पुरोहित और उसके वंशजों को था। इस पूजा की परम्परा मालौन कुल पूजा परम्परा के ही अनुरूप था।

अभिलेखों से इस राजा की दो रानियों का पता चलता है पर कहीं कहीं इसकी तीसरी रानी धरणीन्द्र देवी का नाम भी आया है जिसे जयवर्मन II की माता माना गया है।

उक्त तथ्यों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि जयवर्मन II एक योग्य और वीर शासक था, यह उस समय कम्बुज की गद्दी पर बैठा जिस समय कम्बुज को एक वीर साहसी एवम् योग्य शासक की जरूरत थी जो यहाँ की बिखरी राजनीतिक एकता और शक्ति को पुनर्गठित कर इसे विदेशी आक्रमणों से सुरक्षित करता और इसकी खोई जातियों को जयवर्मन II ने पूरा कर दिखाया। इसकी राजनीतिक उपलब्धियों का पता तो उसकालीन लेखों से चल जाता है परन्तु जनता की

भलाई के लिए किया गया कार्य तथा इसकी धार्मिक और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ किसी साक्ष्य के अभाव में या तो अज्ञात या अल्प ज्ञात हैं। यों तो हरिहरालय तथा आस निकटवर्ती स्थानों से प्राप्त कला के अत्युत्कृष्ट नमूने इसकी कलाप्रियता को बताते हैं। देवपाल सम्प्रदाय की स्थापना से यह भी ज्ञात होता है कि यह शैव था और तांत्रिक क्रिया का साधक था। इस सम्प्रदाय की स्थापना इसके जीवन की महत्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय घटना थी।

जयवर्मन II ने लम्बे समय तक शांति एवं कुशलता पूर्वक शासन करते हुए 850 ई० में मृत्यु को प्राप्त हुआ और मृत्योपरान्त परमशिवलोक की उपाधि से विभूषित हुआ।